IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 8, April 2024

बघेलखण्ड में पवाई रूल्स तथा देशी रियासतें एवं करद राज्य

डॉ. (श्रीमती) विभा श्रीवास्तव[1] व श्रीमती अलका सिंह परिहार[2]

प्राध्यापक इतिहास विभाग, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रीवा, म.प्र.[1]

एम.ए., एम. फिल (इतिहास) शोधार्थी, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रीवा, म.प्र.[2]

शोध सारांश –

महाराज विक्रमादित्य के द्वारा रीवा राजधानी बनाये जाने के पश्चात् बघेल वंशीय शासकों की नई प्रशासनिक नीति प्रभावी होने लगी। यह वह दौर रहा जब केन्द्रीय सत्ता के रूप में मुगल बादशाहत देश में प्रभावी होने लगी थी उनकी शासन नीति भी किसी न किसी रूप में शासन व्यवस्था पर प्रभाव डालने लगी। बघेलवंश के शासक बांधगढ़ से सत्ता का केन्द्र बिन्दु बनाने के लिए रीवा को चुना। रीवा के प्राचीन बस्ती रनबहादुर गंज में बीहर–बिछिया के संगम पर अधबने किले जिसे शलीम साहब ने बनवाया था की मरम्मत कर कोट का निर्माण कराया। कोट के चारों ओर बुर्ज बनवाये गये और उनमें तोपें चढ़ाई गईं। इस तरह राज्य संचालन की एक नई व्यवस्था बघेलवंश शासकों में प्रारंभ हुई। उपरोक्त बिन्दुओं को इस शोध पत्र में शामिल करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द :– बघेलखण्ड, पवाई रूल्स, देशी, रियासतें, करद, राज्य महत्वाकांक्षा, नीतिवान आदि।

प्रस्तावना :–

बघेलवंश शासकों की यह महत्वाकांक्षा नीतिवान शासक विक्रमादित्य से प्रारम्भ हुई वे विद्वान् तो थे ही विद्वानों के आश्रय दाता भी थे। घनश्यामदास उनके बरबारी कवि थे इनके पिता विशम्भरदास को विक्रमादित्य ने राजकाज में सहयोग के लिए खासकलम के पद पर जहाँगीर बादशाह से मांग लिया था। अरैल का परगना इन्हें वृत्ति में दिया गया था।[प]

बादशाह जहाँगीर से तादाम्य स्थापित कर विक्रमादित्य के पुत्र अमर सिंह ने पंचहजारी मनसबदारी पद प्राप्त किया। अमर सिंह रीवा के प्रथम नरेश थे जिन्होंने मुगलों की मनसबदारी पद ग्रहण किया था। इनके राजसत्ता मुगल बादशाहों की कृपा पर निर्भर थी जिसके माध्यम से छोटी–छोटी राजसत्ताओं पर रीवा नरेश अपना प्रभाव बनाने की कोशिश करने लगे। पर शासन काल के प्रारंभ में बांधवदेश की राजकीय परिस्थिति का पतन होने से उन्हें विशेष सफलता न मिल सकी। नये व्यवस्था के तहत रीवा को राजधानी बनाने के पश्चात् अमर सिंह ने आस–पास के भौगोलिक क्षेत्रों का नवीन सर्वेक्षण कराकर किलों एवं तालाबों का निर्माण करने के साथ ही नवीन बस्तियाँ आबाद करने की मुहीम चलायी। जिसके चलते वि.सं. 1690 के आस–पास उन्होंने अमरपाटन के किले का निर्माण कराकर तालाब खुदवाया और अमरपाटन रखा। इसी दौरान दक्षिण रीवा में भी उन्होंने अपने नाम पर अमरपुर ग्राम आबाद किया।[पप]

प्राचीन शासन विधान का आजकल बहुत कम पता चलता है। अति प्राचीन कागजातों से तत्कालीन पद्धति का अवश्य कुछ पता चलता है। भारत के अन्य राज्यों की भाँति यहाँ के महाराजा स्वयं अपनी प्रजा के पूर्ण स्वत्वाधिकारी हुआ करते थे। प्राचीन, समय से यह प्रथा चली आई थी; कि राजा अपने राजकाज का सब अधिकार और भार अपने दीवान को सौंप देता था। सोलहवीं सदी तक राजा के पास एक ऐसा लड़ाई दल तैयार रहा करता था; जो हमेशा लड़ाई में जाने के लिए प्रतीक्षा किया करता था। कर वसूल करके राजा दल बल के साथ वर्षा ऋतु के पहले राजधानी में वापस आया करता था। लड़ाई में योग देने

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 8, April 2024

वाले इन सरदारों को दरबार की ओर से जागीर में मिले रहते थे। शेष गाँव कोठार या जाप्ता के कहे जाते थे। वृत्ति की पवाई सिविल के नौकरों के लिए दी जाती थी । ब्राह्मणों को पैंपखार और मन्दिरों के लिए देवार्थ की भी पवाइयाँ थीं। इस प्रकार कर वसूली का विधान था । कुछ गाँव उस समय केवल यही तीन पवाइयाँ; अर्थात् जागीर, वृत्ति और कोठार मुख्य मानी जाती थीं। विक्रमी सम्वत् 1584 में जबकि बाबर ने भारत का प्रशासनिक संगठन किया उस समय बान्धवगढ़ के महाराज वीरसिंह को यह प्रदेश नानकार लिख दिया था। महाराज अजीतसिंह के समय में यही नानकार वृत्ति के रूप में परिवर्तित हो गया। महाराज वीरसिंह के शासन काल से ही मुगल राज का विकास भारत में हुआ। बान्धवगढ़ के महाराज मुगलकालीन सत्ता के अनुयाई थे। जो रीति और रिवाज मुगल राज्यान्तर्गत बरते जाते थे, उन्हीं का प्रचलन इस राज्य में भी था। मुगलकालीन सत्ता का अन्त महाराज अजीत सिंह के समय से होता है। समय–समय पर रीवा के महाराजाओं को बादशाह की सहायता करनी पड़ती थी। उस समय फौजी ताकत का विशेष महत्व था और खास कर घुड़सवार सेना का। महाराज वीरसिंह कनवाहा के मैदान में चार हजार घुड़सवार सेना लेकर मुगल सम्राट बाबर के खिलाफ वि.सं. 1584 में राणा साँगा की सहायता के लिए गए थे। यद्यपि इस युद्ध में हिन्दुओं की पराजय हुई फिर भी बाबर ने अपनी "तुजुक बाबरी (दिनचर्या) में महाराज वीरसिंह का नाम भारत के तीन प्रसिद्ध महाराजाओं में लिखा है। महाराज वीरसिंह की वीरता से रीझ कर उक्त महाराज से मैत्री की भावना स्थापित करली थी और इस राज्य के नानकार का पाट महाराज वीरसिंह को दिया था।[पपप] मूगल बादशाहों के चलाए हुए सिक्कों का रिवाज भी इस देश में था। यह सम्बन्ध लगभग कई सदियों तक चलता आया। महाराज वीरसिंह ने जितना ही अधिक अपने प्रभाव से राज्य के सीमा का विस्तार किया उतना ही कम विस्तार महाराज भाव सिंह के समय में हुआ। इस तरह बघेलवंश राजाओं के सीमा क्षेत्र में उतार–चढ़ाव का दौर जारी रहा। जिसमें स्थिरता मुगल बादशाहत के पराभाव तथा ब्रिटिश हुकूमत के प्रभावशाली होने के साथ हुई।

यद्यपि वर्तमान शासन प्रबन्ध की शुरूआत महाराज अजीतसिंह के शासन काल से होती है। इन्हीं के समय से प्राचीन काल से चली आती हुई प्राचीन प्रणालियों का चलन कम होने लगा था और उसका प्रधान कारण था अँगरेजी सत्ता का पूर्ण रूप से भारत में स्थापित हो जाना। किन्तु विक्रमी सम्वत् 1870 में जबकि रीवा सरकार और अँगरेजी शासन के बीच में दूसरी मन्धि हुई, उसी समय से नवीन शासन प्रणाली का भी सूत्रपात हुआ। फिर भी कुछ समय तक वह प्रथा किसी न किसी रूप में चलती ही रही। वि. सं. 1900 मे महाराज विश्वनाथ सिंह ने नवीन शासन प्रणाली के प्रतीक मिताक्षरा न्यायालय की स्थापना की। किन्तु इसमें भी प्राचीन प्रणालियों का निर्वाह होता ही रहा वि. सं. 1914 के भारत व्यापी स्वतंत्रता संग्राम के पश्चात् इस राज्य में भी आजकल की रह कचत्रियों की स्थापना प्रारम्भ हुई। दफ्तर बनाए गए और उनके लिए अधिकारियों का भी चुनाव हुआ। इस तरह वर्तमान शासन प्रबन्ध के तीन भाग हो जाते हैं। (1) वि. सं. 1870 से वि. स. 1914, (2) वि.सं. 1914 से वि.सं. 1936 से समय तक। (3) 1936 से स्वतंत्रता प्राप्ति तक। कचहरियों की प्रथा चल पड़ी। दीवान और खासकलम कायदे से कचहरी लगाने लगे लिखा पढ़ी की रीति भी चल पड़ी। अधिकारियों को संख्या बढ़ गई। राज तीन परगनों में बांट दिया गया। (अ) परगना रीवा इस में वर्तमान रीवा के उत्तरी जिले थे (ब) परगना रामनगर इसमें वर्तमान रीवा के पूर्वी जिले (स) परगना ताला इसमें वर्तमान रीवा का दक्षिणी जिला शामिल था।

रीवा राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में वर्गीकरण के माध्यम से अलग–अलग छोटी–छोटी राजकीय सत्ता आई। जिनकी प्रतिबद्धता शासक के प्रति होती थी। शासन द्वारा विभिन्न सेवाओं के लिए तथा पुराने राज परिवारों को तथा स्वतंत्र जागीरें और इलाकों का स्वामित्व उन्हें देते हुए राजस्व वसूलने की व्यवस्था दी गई। इस व्यवस्था के साथ केन्द्रीय शासन अर्थात् रीवा स्टेट द्वारा अनुबंध के तहत प्रदान की गई। इस तरह प्रदाता महाराजा रीवा हुआ करते थे उनके आदेशों तथा न्यायिक व्यवस्था का पालन करना अधीनस्थ देशी रियासतों की जिम्मेवारी होती थी। न्यायिक और वृत्तीय व्यवस्था का नियंत्रण महाराजा के पास होने

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 8, April 2024

के साथ–साथ सैन्य व्यवस्था और नीतिगत कार्यों को संचालित करने की अनुमति भी राज्य से ही मिलती थी। इस दौर में बघेलखण्ड का विस्तृत भू–भाग रीवा राज्य के अधीनस्थ हो गया था। जिस पर अप्रत्यक्ष दिशा निर्देश ब्रिटिश हुकूमत का रहता था। देखने के लिए रीवा राज्य स्वतंत्र थे उनकी सत्ता भी तटस्थ थी। पर राज्य संचालन के लिए बघेलवंश के शासकों को दिल्ली की ओर ब्रिटिश हुकूत का रुख देखना पड़ता था।

ब्रिटिश हुकूमत को अंशदान के रूप धन, बल देने तथा राजकीय कार्यों के संचालन के लिए विभिन्न तरीकों से देशी रियासतों एवं कुछ सम्बद्ध राज्यों से कर के रूप में वसूली की जाती थी। जिन्हें करद राज्य अर्थात् कर देने वाले राज्य करद राज्य कहा जाता था। कर प्राप्त करने की यह व्यवस्था पवाई रूल्स के तहत वैधानिकता प्रदान की गई थी।

रीवा राज्य की पवाईयों की उत्पत्ति या तो दरबार दान करने से हुई या उसके द्वारा विंजित स्वतंत्र राज्यों को सम्मिलित किए जाने से हुई। इस तरह पवाइयों को ऐतिहासिक दृष्टि से दो वर्गों में बाटा जा सकता है–1.वे पवाइयॉ जो कभी रीवा राज्य से स्वतंत्र थीं और जिनका अस्तित्व स्वयं एक राज्य के रूप में था। बाद में रीवा राज्य का प्रभुत्व उन पर कायम हुआ' और वे रीवा की सम्प्रभुता के अधीन हो गई। पवाईयों के इस वर्ग का वर्णन अनुच्छेद(ख) में किया जायेगा। 2.वे पवाइयॉ जो रीवा राज्य द्वारा समय–समय पर निर्मित की गई।

मौलिक मतभेद यह है कि क्या उक्त ऐतिहासिक विभक्तीकरण पवाइयों के वर्तमान चरित्र पर प्रतिफलित किया जा सकता है। एक विचार यह है कि यह भेद पवाइयों में अन्तर्निहित और विद्यमान है। दूसरा विपरीत दुष्टिकोण यह है कि दरबार की सम्प्रभुता एक बार आरोपित या स्वीकार किए जाने के बाद यह विभेद अस्तित्वहीन और निष्प्रभावी हो जाता है।' यह उल्लेख करना प्रासंगिक हेागा कि रीवा राज्य में सम्मिलित किए जाने के पूर्व उन स्वतंत्र राज्यों की क्या स्थिति थी। जिन्होंने रीवा के मातहत पवाई बनकर अपने अस्तित्व का विलीनीकरण कर दिया। इस वर्ग में नईगढ़ी पहाड़ी और जोधपुर मूलतः मऊ के सेंगर राजा द्वारा छोटे भाईयों को गुजारे में दी गई पवाइयॉ थी। सन् 1800 में जब मऊ राज्य को विजित कर रीवा के आधीन किया गया उस समय भी उक्त तीनों पवाईयॉ मऊ के अन्तर्गत थी। उस वर्ष रीवा दरबार ने मऊ राज्य की सम्प्रभुता अधिगृहीत की ।तब इन तीनों पवाइयॉ को कायम रखा गया। इसलिए ये पवाईयॉ वास्तव में रीवा दरबार की पवाइयॉ बन गई। सन् 1814 में नईगढ़ी की विशेष प्रार्थना पर रीवा दरबार ने उसके साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित करना स्वीकार किया।

सन् 1835 में मऊ राज्य को पूर्णरूप से रीवा में सम्मिलित कर लिया गया। दरबार द्वारा गुजारे के तौर पर मऊ को एक नया इलांका बिछरहटा दिया गया और बाद में राजा मऊ को राजा बिछरहटा कहा जाने लगा। सेंगर ठाकुरों का दूसरा इलाका गंगेव है। रीवा राज्य द्वारा जिसे सन् 1710 में विजित किया गया। उस वर्ष गंगेव इलाके का दो तिहाई भाग बगावत करने, के आरोप में और मामले का बकाया न अदा करने के कारण जब्त कर लिया गया, बाकी एक तिहाई भाग ठाकुर के लिए छोड़ दिया गया। जहॉ तक दो चंदेल ठाकुरों का सम्बन्ध है हम यह पाते हैं कि वे प्रारम्भ में बर्दी राज्य के अंग थे। बर्दी को रीवा द्वारा अधीन बनाकर सन् 1817ई. में राज्य में मिला लिया था।[iv] बर्दी को सम्मिलित करने के बाद एक नया इलाका दिया गया था। दस्तावेजों और परम्पराओं का अवलोकन करने से इसकी ऐतिहासिक उत्पति के आधार पर विशेषस्थिति का आभास नहीं मिलता, इसलिए इनकी उत्पत्ति का यह ऐतिहासिक विभेद लुप्त प्राय जो जाता है।

इस भावनात्मक भिन्नता को छोडकर दरबार और सभी पवाईयों के मध्य एक जैसी स्थिति है। इसलिए प्रत्यक्षतः ऐसा कोई कारण हमें दिखाई नहीं देता जिससे ये न कहा जा सके कि ये सभी पवाईदार है और उन्हें दी गई भूमियॉ या ग्राम पवाई हैं।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 8, April 2024

पवाई कमेटी ने अलबत्ता ये सिफारिश की थी कि महत्वपूर्ण पवाइदारों को इलाकेदारों की श्रेणी में रखा जाय और उन्हें कुछ विशेष अधिकार दिए जायें। आलोच्य वर्ग की पवाइयों पर विहंगम दृष्टि डालने के पश्चात् इनके ऐतिहासिक विकासक्रम का विस्तृत सिंहावलोकन करना उचित होगा।

- **मऊ का सेंगर इलाका (बिछरहटा)–**

पूर्व में राजा मऊ रीवा रियासत से स्वतंत्र था। सन् 1800 में रीवा दरबार ने इसे अपने आधीन किया। उस समय मऊ पर रूपये 6,000 मामला निश्चित किया गया। सन् 1833 में मामला में वृद्धि करके रूपया 17,250 पच्चीस माह के लिए निर्धारित की गई। उसके साथ आज्ञा पालन और सेवा की साधारण शर्ते जूड़ी हुई थी। सन् 1833 में मामला अदा न करने के कारण रीवा दरबार ने मऊ को अपने राज्य में लिया। उस वर्ष से मऊ राज्य में विलीनीकरण हो गया।

उपर्युक्त सामंत या तो रीवा द्वारा पराजित होकर राज्य में सम्मिलित हुए या रीवा का सामन्त होना उन्होने भयवश या अन्य पडोसी राज्यों से आक्रान्त होकर सुरक्षा के लिए स्वीकार किया। अन्ततौंगत्वा रीवा दरबार की सम्प्रभुता उन पर आरोपित हुई। इसलिए उनकी हैसियत कमोवेश वही थी जो रीवा द्वारा प्रदत्त पवाई और इलाकों की थी। यदि इनकी कोई विशेष हैसियत थी तो उसे प्रमाणित करने के लिए पांट और कबूलियत जैसे दस्तावेजों की शर्तो और परम्पराओं या परिपाटियों का सहारा लेना पड़ेगा। विलीनीकरण के पश्चात राजा मऊ को बिछरहटा इलाका गुजारे के लिए दिया गया। इस दान का उल्लेख सन् 1845 में महाराजा विश्वनाथ द्वारा दिए गए पट्टे में है। राजा की मृत्यु संतानहीन अवस्था में हुई और महाराज रघुराज सिंह द्वारा राजा के दत्तक पुत्र को गुजारे के लिए नई पवाई दी गई। ये पट्टा 1855 में दिया गया। जिसकी राजस्व आय पहले जैसी ही थी और शर्ते भी वहीं थी। यह राजा भी संतानहीन मरा।

सन् 1861 में महाराज रघुराज सिंह ने उसकी विधवाओं को नया पट्टा प्रदान किया गया। विधवाओं ने एक नाबालिग वारिस को गोद लिया। 1873 में नया पट्टा दिया गया। राजा के अवयस्क पुत्र को 1910 में मामला पवाई का पट्टा दिया गया।

- **नईगढ़ी–**

मऊ की 21वी पीढी में राजा प्रहलाद वली ने द्वितीय पुत्र वैसचन्द्र को परवरिश के लिए पनरार और पथरउरा गॉव दिए थे। वैसचन्द्र के दसवें पुश्त में पृथ्वीराज ने अपने इलाका में एक किला बनवाया जिसका नाम नईगढ़ी था। इसी नाम से स्वतंत्र होने की कोशिश की। लेकिन राजा मऊ ने बलपूर्वक नईगढ़ी पर अपना आधिपत्य कायम किया। सन् 1800 में रीवा मऊ की शिकायंत करते हुए आग्रह किया कि नईगढ़ी को वह अपने संरक्षण में ले लें। यह प्रार्थना स्वीकार की गई और उस पर अलग से मामला कायम किया गया। उसी वर्ष नईगढ़ी के ठाकुर रतन सिंह ने बाबू विश्वनाथ सिंह के पक्ष में एक कबूलियत लिखी जिसकी अवधि पच्चीस माह थी और इसमें रूपया 7071 दरबार के लिए मामला देना निश्चित किया गया। सन् 1815 में मामला 1001 रूपया बढ़ाकर किया गया। सन् 1835 में रतन सिंह के पुत्र छत्रधारी सिंह ने एक नई कबूलियत में बढा हुआ मामला रूपया 15750 देना स्वीकार किया। छत्रधारी सिंह के पुत्र प्रताप सिंह ने सन् 1880 में ''गर्वमेन्ट आफ इंडिया'' के सामने दाबा पेश किया कि वह रीवा दरबार से स्वतंत्र है। ए.जी.सी. ने सन् 1882 में ''गर्वमेन्ट आफ इंडिया'' के फैसले की सूचना दी कि उसका दाबा अस्वीकृत किया जाता है। और दरबार का प्रभुत्व बहाल रखा जाता है।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 8, April 2024

- **गंगेव–**

बंकदेव राजा का भाई था। उसका इलाका गंगेव सन् 1710 के पूर्व रीवा राज्य द्वारा अधीनस्थ किया गया जबकि वह पहले से दरबार को मामला देता आया था। उसी वर्ष तत्कालीन ठाकुर रघुनाथ सिंह ने राज्य के विरूद्ध विद्रोह किया। दमन के पश्चात् गंगेव का दो तिहाई हिस्सा दरबार द्वारा राजसात कर लिया गया और एक तिहाई इलाका ठाकुर को मामला पर दे दिया गया। सन् 1810 में दरबार ने 25 माह बास्ते पट्टा, रघुनाथ सिंह के बाद पांचवी पीढी के ठाकुर शिवराज सिह को जारी किया जिसमें रूपये 3000 मामला निश्चित किया गया। इस पट्टे मे दरबार की सेवा करने के लिए इलाकेदार को प्रतिबद्ध किया गया है।

उसके पुत्र महिपाल सिह को 1835 में पच्चीस माह के लिए नया पट्टा जारी किया गया जिसमें मामला पूर्ववत था। इसके अनन्तर रविदत्त सिंह और रामप्रताप सिंह को भी पट्टे जारी किए गए थे। [v]

- **पहाड़ी :–**

इस इलाके का ठाकुर मऊ राज्य की एक शाखा था। यह इलाका भी शेष मऊ राज्य के साथ रीवा रियासत में सम्मिलित किया गया था। सन् 1836 में तत्कालीन इलाकेदार रनधीर सिंह को बारह माह बास्ते पट्टा प्रदान किया गया। मामला रूपया 1100 निर्धारित किया गया था। सन् 1853 में उसके उत्तराधिकारी उदवंद ने दरबार के पक्ष में कबूलियत लिखी जिसमें रूपये 1100 बतोर मामला देना स्वीकार किया और यह इकरार किया कि वह राज्य के अपराधियों को इलाके में आश्रय नहीं देगा। 1926 में भी एक पट्टा ठाकुर रामानुज प्रसाद सिंह को जारी किया गया जिसमें मामले की रकम बढ़ाकर रूपये 2500 वार्षिक की गई।

- **जोधपुर–**

मऊ राज्य की दूसरी शाखा जोधपुर का ठाकुर था। मऊ को रीवा राज्य में सम्मिलित किये जाने के पूर्व जोधपुर का इलाकेदार दरबार के संरक्षण में आ गया था। तत्कालीन इलाकेदार गोविन्दजीत सिंह को पच्चीस माह बास्ते पट्टा 1819 में दिया गया था जिसमें मामला रूपये 2500 निश्चित किया गया था। तत्पश्चात् सन् 1851 ई0 में अमान सिंह , 1880 और 1910 में रामसिंह को पट्टे प्रदान किए गए जो सभी गोविन्दजीत सिंह के उत्तराधिकारी थे।[vi]

- **मड़वास–**

बालेन्दु राजपूत मड़वास में प्राचीनकाल में आबाद हुए थे। इस इलाके के धारक हैं प्रत्यक्षतः बघेल नरेश बीर सिंह 1500–1535 द्वारा बालन्दों को पराजित कर मडवास राज्य को बघेलखण्ड में मिलाया गया था। पूर्ववर्ती ठाकुरों में फतेह सिंह के अधिकार में तीन इलाके थे – मड़वास, पथरौला, महखोर । उसके बाद चौथी पीढी का इलाकेदार भखमशाह इन तीनों इलाकों के लिए रूपया 1200 बतौर मामला दरबार को अदा करता था, जैसा कि सन् 1914 ई. के कबूलियत में दर्ज है। उसका वारिस पुत्र महीपत सिंह हुआ जो 1829 ई. में इलाकेदार था वह बतौर मामला केवल रूपया 430 अदा करता था। मामला घटाने का कारण यह था कि दरबार ने पथरौला इलाका जब्त कर लिया था। उसके पुत्र होरिल सिंह को पट्टा सन् 1835 ई. में जारी किया गया जिसमें मामला की राशि रूपया 675 थी सन् 1892 में पट्टे का नवीनीकरण करते हुए मामला घटाकर रूपया 400 सालाना किया गया क्योंकि महखोर इलाका भी जब्त कर लिया गया था।

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 8, April 2024

होरिल सिंह के पश्चात् उसका भाई खुमान सिंह उत्तराधिकारी हुआ जो 1873 ई. में ठाकुर मड़वास था और रूपया 431 सालाना मामला अदा करता था। उसके बाद 1879 में होरिल सिंह का पौत्र महावीर सिंह इलाकेदार हुआ जो पहले जैसा मामला देता रहा। सन् 1882 में ठाकुर मड़वास ने लाख और अन्य वनोपजों के लिए सुपरिनटेन्डेन्सी प्रशासन के समक्ष दावा पेश किया। दावे की पूरी तरह जांच करने के बाद सुपरइनटेन्डेन्ट ने आदेश जारी किया कि–''मड़वास उस बड़े इलाके का एक हिस्सा है जिसे भारत में ब्रिटिश सरकार की स्थापना के पूर्व रीवा दरबार द्वारा विजित करके अधीनस्थ बनाया गया था। मामला अदा करने की शर्त पर यह भाग तुम्हारे अधिकार में है। इस तरह की जागीरों के लिए जो तरीका अमल में है उसके मुताबिक जागीर की निकासी पर 1/4 भाग देने की तुम पर जिम्मेदारी है लेकिन तुम सिर्फ रूपये 431 सालाना दे रहे हो। जबकि निकासी रूपये 2500 से रूपया 3000 सालाना है। वर्तमान निकासी की तुलना में जो मामला तुम देते हो वह बहुत कम है यही तुम्हारे लिए पर्याप्त रिआयत है। लाख और दूसरे बनोपजों पर राज्य का अधिकार है। इसलिए उन पर तुम्हारा दाबा वाजिब नहीं है।'' (1अप्रैल 1882)[vii]

सीधी–मड़वा (चौहान)– पुराने समय में संयुक्त प्रान्त के मैनपुरील से चौहान आब्रजन करके सीधी इलाका में आबाद हुए जिसे चौहानखण्ड भी कहते हैं। उन्होंने कई गांवों में कब्जा करके अधिकृत भूमि के लिए रीवा राज्य को जमा देने लगे। वे अक्सर उपद्रवी और अनुशासनहीन हो जाया करते थे और राज्य द्वारा बल प्रयोग से उन्हें नियंत्रित किया जाता है। आखिरकार सन् 1844 में पूरा इलाका दस वर्ष के लिए रूपया 2000 वार्षिक पर चौहानों को पट्टे पर दे दिया गया। सन् 1856 में उन्होंने इकरारनाम तहरीर किया कि इलाका के सीमा शुल्क में वे हस्तक्षेप नहीं करेगें। जिसे तन्हा दरबार की सम्पत्ति माना गया । सन् 1874 में सीधी और मड़वा का समस्त इलाका रनजोर सिंह और भागवत सिंह को रूपया 5201वार्षिक मामले पर पट्टे पर दिया गया। सन् 1879 मे इन चौहानों ने एक इकरारनामा के जरिए दशहरा के अवसर पर बन्धु बान्धवों सहित सेवा देने का वायदा किया।

चौहान उग्र और उपद्रवकारी हुए इसलिए दरबार ने उनका दमन करके आज्ञाकारी और बफादार रहने का बचन लिया। सन् 1882 में चौहान ठाकुरों ने भी जंगलात, परमिट और आबकारी के लिए दाबा प्रस्तुत किया। सुपरिनटेन्डेन्सी द्वारा 19 अप्रैल 1883 को अधोलिखित हुक्म दिया गया।'' महाराज रघुराज सिंह द्वारा दिए गए पट्टे के अवलोकन के बाद यह आदेश परित किया जाता है कि उनका परमिट, जंगललात, आबकारी, खानखदान, चरू, नावघाट पर कोई हक नहीं है। अलबत्ता निस्तार के लिए जंगली लकड़ी का इस्तेमाल कर सकते हैं। इलाका के चारागाहों में मवेशी चराने के लिए उन पर कोई फीस नहीं लगाई जायेगी। इलाका के बाहर से आने वाले मवेशियों पर चरू टैक्स लगाने का दरबार को अधिकार होगा। बैठकी, बयाई, कोल्हूआवन, ढेकुरिआवन, मंघतिआवन, नदावन के अबवाव उन्हें दिए जाते हैं। रैयतों की लावारिस जायजाद पर भी ठाकुरों का अधिकार होगा, लेकिन इलाका के बाहर से आने वालों के लावारिसी माल पर उनका हक नहीं होगा। लेकिन लावारिसी जायदाद पर उनके अधिकार को 1894 में सुपरिनटेन्डेन्ट द्वारा और 1912 में हिज हाईनेस द्वारा मनसूख कर दिया गया। [viii]

- **बर्दी (चन्देल)–**

बुन्देलखण्ड में महोबा के चंदेलों की एक शाख ने बहुत पुराने जमाने में आब्रजन करके बर्दी को अपना निवास बनाया। जहां उन्होंने एक आजाद रियासत की बुनियाद डाली 40 वें राजा राव रतन ने 1503 में एक किले का निर्माण किया, लेकिन बाद में रीवा दरबार द्वारा उसे अपना मातहत जीतकर बना लिया गया। यह सन् 1778 में तहरी किए गए इकरारनामें से जाहिर है, जिसमें राव रतन के पुत्र हृदयशाह ने इकरार किया कि सन् 1768 से 1771 ई. के बकाया मामले की रकम रूपया 84004 एक फीसदी माहवार की दर से मयसूद वह अदा करेगा। उसने आगे यह कबूल किया कि एक हाथी, पच्चीस घोड़े और 500 पियादा

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 8, April 2024

की सेवा मांग करने पर राज्य को देगा, वह अपने मातहत सिंगरौली इलाका पर ज्यादती नहीं करेगा। इस कबूलियत पर अमल न करने पर उसका इलाका जब्त किया जा सकता है। उसी साल उसका पौत्र गोविन्द सिंह उत्तराधिकारी हुआ और दरबार के हक में कबूलियत लिखा कि बर्दी और सिंगरौली दोनों इलाकों का पच्चीस माह का मामला रूपया 2101 देना उसे स्वीकार है। बर्दी के मामले की अनुमानित राशि 19,601 और सिंगरौली की रूपया 1400 थी। उसका पुत्र अजीत सिंह उसके बाद वारिस हुआ जिसने सन् 1804 में कबूलियत तहरीर की और सन् 1796 से 1802 का बकाया मामला रूपया 95,003 देना मंजूर किया और पहले वाली सेवा भी देते रहने का वायदा किया।

सन् 1808 और 1811 के दरमियान किसी समय एक दस्तावेज के जरिए उसने सिंगरौली इलाका दरबार के सुपुर्द कर दिया क्योंकि उसका नियंत्रण करना उसके वश में नहीं था। सन् 1817 में अपनी रानी की सहमति से उसने दरबार को सम्पूर्ण बर्दी इलाका सौंप दिया जिसमें 18 परगने थे। समर्पण पत्र में उसने बयान दिया कि इलाके से भविष्य में वह कोई वास्ता नहीं रखेगा जिसे वह दरबार को समर्पित कर रहा है। दरबार उस पर पूर्ण अधिकार रखेगा। दरबार जो कुछ जीवन पर्यन्त परवरिश केलिए उसे देगा उसी से वह संतुष्ट रहेगा। उसके भाइयों, उत्तराधिकारियों तथा अन्य सम्बन्धियों का इलाके पर कोई दाबा नहीं माना जायेगा।

इस तरह समस्त बर्दी इलाका रीवा राज्य में मिला लिया गया। राजा के गुजारे के लिए रूपये 2000 वार्षिक निर्धारित किए गए। राजा की सन् 1819 में निःसंतान मृत्यु हो गयी और रूपया 1300 वार्षिक आमदनी की पवाई गुजारे के लिए उसके भाई प्रतिपाल सिंह और भतीजों दलथम्मन सिंह और जगजीत सिंह को 1823 ई. में प्रदान की गई। सन्1858 ई. में रूपये 2000 की अतिरिक्त पवाई भवानी सिंह पुत्र जगजीत सिंह को उसकी और बड़े भाइयों की विधवाओं की परवरिश के लिए प्रदान की गई। उसके पुत्र राघव प्रताप सिंह को ही फिर से रूपये 1084 सालाना की अतिरिक्त पवाई गुजारे के लिए 1874 ई. में दी गई। उसके बाद उसका पुत्र अखण्डप्रताप सिंह वारिस हुआ जिसकी मृत्यु1914 ई. में हुई। उसका भाई देवेन्द्र प्रताप सिंह उत्तराधिकारी हुआ। उसके पास रूपये 10,000 सालाना का इलाका था जो मामला हकीकत में नहीं था।[ix]

- **सिंगरौली–**

सिंगरौली बर्दी राज्य के अंतर्गत एक इलाका था जो वर्दी राजाओं को मामला देता था। इसके इलाकेदार जाति के खैरवार थे। सन् 1811 ई. बर्दी राजा अजीत सिंह ने सिंगरौली इलाके को रीवा दरबार को सौंप दिया क्योंकि राजा सिंगरौली उसे नियमित रूप से मामला नहीं देता था। सन् 1912 में सिंगरौली के राजा उदवत सिंह ने एक कबूलियत तहरीर की जिसमें रीवा दरबार को इलाका के सभी स्रोतों से प्राप्त जमा का 1/4 जो रूपया 701 वार्षिक होता था बतौर देन अदा करना मंजूर किया। उसने यह भी स्वीकार किया कि जांच–पड़ताल करने पर इलाका की आमदनी से अगर ज्यादा देनदारी साबित होगी तो वह अदा करना मंजूर किया। उसने राज बर्दी की ज्यादतियों से सुरक्षा के लिए दरबार से आग्रह भी किया।

सन् 1816 में कबूलियत का नवीनीकरण करते हुए रूपया 700 वार्षिक, इलाका से प्राप्त होने वाली आमदनी का चौथ देना उसने मंजूर किया। उसके बाद उसका पुत्र छत्रशाह वारिस बना जिसे 1824 में राज्य ने मान्यता दी। 1840 में उसके नाम एक पट्टा दिया गया। पट्टा में दर्ज किया गया कि चूंकी इलाका की निकासी रूपये 24500 मूल्यांकित की गई है, उसका 1/4 रूपया 6225 दरबार को देय है और 3/4 इलाकेदार के लिए छोड़ा जाता है। एक हाथी, दस घोड़ों और 200 पियादों की सेवा आरोपित की गई। दरबार ने उसकी सुरक्षा का आश्वासन दिया। सन् 1850 ई. में उसे नया पट्टा दिया गया जो उस मुद्दत के बाद दिया गया जिसमें देन अदा न करने के कारण इलाका जब्ती में था। इसमें मामला रूपया 6,125 सालाना निश्चित किया गया। रैय्यत पर जुल्मोसितम करने की मुमानियत की गई। और हिसाब से ज्यादा जमा की वसूली से रोका गया। सन् 1892 में

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 8, April 2024

कबूलियत लिखी गई जिसमें वही मामला निर्धारित किया गया। सन् 1858 ई. में उसका पुत्र नरेन्द्र सिंह उत्तराधिकारी हुआ। 1859 में नई कबूलियत तहरीर की गई जिसमें रूपया 9000 मामला तय किया गया जो रूपया 36000 अनुमानित निकासी का एक चौथाई था। उसके पश्चात् पुत्र उदित नारायण सिंह इलाके का वारिस जिसने सन् 1872 ई. में अपने इलाका में दरबार द्वारा परिमिट टैक्स बसूल करने पर आपत्ति की। इस पर दरबार ने इलाका जब्त कर लिया।

राजा सिंगरौली ने गर्वमेन्ट आफ इंडिया के पास अपील दायर की, जिसने सन् 1874 में फैसला दिया कि वह उसका पक्ष लेकर हस्तक्षेप नहीं कर सकती। सन् 1881 में उसी फैसले की पुनरावृत्ति हुई। सन् 1882 में सुपरिनटेन्डेन्सी प्रशासन के दौरान एक नया पट्टा जारी किया गया जिसमें रूपये 9000 की चौथ निश्चित की गई किन्तु खान–खदान, जंगली पैदावार लाख, परमट, आबकारी जैसे मदों में इलाकेदार के अधिकार को अमान्य किया गया। निस्तार के लिए पत्थर खदान और जंगली लकड़ी के हक को तस्लीम किया गया। एक हाथी, पांच घोडे और पचास पियादों की सेवा निर्धारित की गई।

उदित नारायण सिंह के बाद उसका पुत्र रूद्र प्रताप सिंह वारिस हुआ, जिसके लिए 1885 में पट्टे का नवीनीकरण किया गया। उसने 1890 में कबूलियत के जरिए पट्टे की शर्ते स्वीकार की। उसकी मृत्यु पुरूष संतान के बिना हुई। 1926 में दरबार ने इलाका राजसात कर लिया। विधवा के लिए बतौर गुजारा नकद अदायगी का प्रावधान किया गया।[x]

- **डीह (वेणुवंश राजपूत)–**

डीह के ठाकुर वेणुवंश राजा की शाखा है। जो कभी त्योंथर का शासक था और रीवा राज्य से स्वतंत्र था। ये ठाकुर वेणुवंश राजा के पवाईदार थे। महाराज अवधूत सिंह (1695–1755) के शासन काल में वेणुवंशियों का त्योंथर राज्य रीवा में शामिल कर लिया गया। 1852 ई. में बाबू साहेब विश्वनाथ सिंह ने तत्कालीन ठाकुर रंजीत सिंह को पच्चीस माह का पट्टा प्रदान किया था। एक कबूलियत भी लिखी गयी थी। मामला की रकम रूपये 500 गौहरशाही सिक्का तय की गई। 1825 में भी पट्टा जारी किया गया था। इसी तरह 1856 में भी पट्टा जारी किया गया उस वक्त मामला सिर्फ 300 रूपया तय किया गया था।[xi]

- **सिंघवाडा (गोड़)–**

सिंघवाडा के इलाकेदारों को राजा की उपाधि मिली हुई थी। वे गोड़ जाति के थे, मूलतः मंडला के गोड़ राजा के सामंत थे। मंडला राज्य के पतन के पश्चात् सिंघवाडा के इलाकेदार रीवा दरबार के आश्रय में आ गए और रीवा के सामंत हो गए। नागपुर के भोंसला राजा ने इस इलाका को सोहागपुर और चंदिया के साथ रीवा से छीनकर अपने राज्य में मिला लिया। सन् 1860 में ब्रिटिश सरकार द्वारा यह रीवा को वापस किया गया। सन् 1861 में ठाकुर हनुमंत सिंह को रीवा की तरफ से सिंघवाड़ा इलाका प्रदान किया गया। पट्टा में 2000 जमा निर्धारित थी। सन् 1870 में जब पट्टे का नवीनीकरण किया गया तो मामला जमा रूपया 3200 सालाना बढ़ा दी गई। उसका भतीजा होल्कर सिंह उत्तराधिकारी हुआ जिसे 1894 में पट्टा दिया गया। इसमें मामले की रकम बढाकर रूपये 4000 कर दी गई। सन् 1916 में राजा ने अपनी रजामन्दी से इलाका दरबार को सौप दिया। इसके अलाबा उसके जीवन पर्यन्त सिंघवाड़ा ग्राम की पवाई दी गई। सन् 1916 में इलाका कोठार में परिवर्तित कर दिया गया।[xii]

- **थरहार (गोंड जमींदार) :–**

यह इलाका भी मण्डला राज्य के अन्तर्गत गोंड़ ठाकुरो का था। ऐसा प्रतीत होता है कि यह इलाका भी मण्डला राज्य के टूटने पर रीवा में शामिल किया गया। थरहार को भी नागपुर के भोंसला राजा ने सिंघवाड़ा और दूसरे इलाकों के साथ अपने

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 8, April 2024

राज्य में सम्मिलित कर लिया था, तदनन्तर ब्रिटिश भारत में चला गया। यह इलाका भी 1860 में सोहागपुर के साथ रीवा को वापस मिला। 1860 से 1875 तक यह कोठार था उसी साल जमींदार हनुमान सिंह को यह इलाका प्रदान किया गया। पट्टे में जमा रूपया 940 सालाना निश्चित की गई। पट्टा जारी करते बक्त रूपया 6580 बतौर नजराना दरबार को दिया गया। सन् 1904 में जमींदार के लाबल्द मरने पर इलाका पहले कोर्ट आफ् बार्ड्स के तहत रखा गया अंततः राज्य में विलीनीकृत हो गया।[xiii]

- **मुण्डा (गोंड़)–**

मुन्डा के पवाईदार भी गोड़ हैं सन् 1860 में यह भी दरबार को वापस किया गया था। सन् 1875 तक यह कोठार रहा। जब इसे धौंकल सिंह को 240 रूपये सालाना जमा पर दिया गया। उस बक्त रूपया 1680 नजराना भी दिया गया। उसके उत्तराधिकारी पहलवान सिंह को 1895 में पट्टा दिया गया। उसके पुत्र जगजीत सिंह को 1927 में पट्टा जारी किया गया।[xiv]

- **गिरारी (गोंड़)–**

यह भी दरबार को 1860 में वापस मिला था। पवाई के धारक गोड़ थे सन् 1875 तक यह भी कोठार रहा। इसे हीरा सिंह को रूपया 2590 बतौर नजराना लेकर और रूपया 370 सालाना जमा पर प्रदान किया गया। 1910 में उसका भतीजा गजरूप सिंह वारिस बना। उसे नवीन पट्टा जारी किया गया। जिसमें वार्षिक रूपया 1105 निश्चित की गई।[xv]

राज्य द्वारा निर्मित सामन्त और प्रदत्त पवाईयां– गहोरा और बान्धव राज्य की स्थापना के समय से सामन्ती प्रथा के अस्तित्व के संकेत मिलते हैं। उस युग में जबकि बघेलों की शासन् प्रणाली अपरिपक्व अवस्था में थी, जब राजतंत्र का स्वरूप एक सैनिक शिविर से अधिक कुछ भी नहीं था, तब सैन्य प्रबन्ध का रीढ़खम्भ सामन्तवाद ही था। ये सामन्त अपने सैनिक संगठन और शक्ति के अनुरूप बान्धव नरेश द्वारा प्रदत्त जागीरों का उपभोग करते थे। इसके बदले वे अपनी सैनिक सेवा राज्य को समर्पित करते थे। प्राचीर आवेष्ठित बांधवगढ़ के पर्वतीय दुर्ग से निकलकर राजा द्वारा सैनिक अभियान का संचालन मैदानी क्षेत्रों में किया जाता था।

इस प्रकार निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि विजित प्रदेशों से कर वसूल कर राजा और सामन्तों में बंटवारा किया जाता था। सामन्ती प्रथा का यह सिलसिला अतीत से लेकर राज्य की समाप्ति तक चलता रहा। सामन्त राज्य के दो तिहाई क्षेत्रफल पर फैले हुए थे। राज्य शासन के हर अंग पर ये हावी थे। राजा की भी अपनी विवशता थी। पवाई के माध्यम से ही इतने विशाल क्षेत्र पर वह नियंत्रण रख सकता था। इसलिए इतनी संख्या में पवाईयां निर्मित की गई थीं। वीरभानूदय काव्य के अनुसार महाराज बीरभानु (1535–55 ई.) के शासन काल में सामन्तवाद की राज्य व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका थी। काव्यकार का कथन है कि शक्तिशाली शासन की स्थापना केवल वही राजा कर सकता है जो अपने सामंतो के सहयोग से राज्य प्रबन्ध का न्यायपूर्वक संचालन करता है।[xvi]

---

[i] रीवा राज्य का इतिहास : गुरुरामप्यारे अग्निहोत्री, पृ. 57
[ii] रीवा राज्य का इतिहास : गुरुरामप्यारे अग्निहोत्री, पृ. 58
[iii] रीवा राज्य का इतिहास : गुरुरामप्यारे अग्निहोत्री, पृ. 33
[iv] compendium part 1 page 2

IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 8, April 2024

[v] compendium 3,4
[vi] compendium p 10
[vii] compendium p 12,13
[viii] compendium p 14,15,16
[ix] compendium p 18,19
[x] compendium p . 20-23
[xi] compendium p 66,67
[xii] IDIDP 69-73
[xiii] compendium, p. 72-73
[xiv] compendium, p. 72-73
[xv] compendium, p . 75
[xvi] बीरभानूदोय काव्यम् पंचमसर्ग, श्लोक 35